7

जैनदर्शन में ध्वनि का स्वरूप

प्राचीन जैन दार्शनिक साहित्य व तंत्रविज्ञान ध्वनि को कण स्वरूप में ही स्वीकार करते हैं, इतना ही नहीं अपि तु उनके रंग भी उन्होंने बताये हैं। उसके साथ पश्चिम के अर्वाचीन साहित्य में भी पश्चिम की दो तीन व्यक्तियाँ ने ध्वनि के वर्ण/रंग देखे हैं ऐसे संदर्भ प्राप्त होते हैं। उसी प्रकार श्री अशोक कुमार दत्त को भी इस प्रकार की प्राकृतिक देन है। वे आज भी ध्वनि के रंग को प्रत्यक्ष देख सकते हैं।

जैनदर्शन ध्वनि को पुद्गल परमाणुसमूह से निष्पन्न मानता है, अतः पुद्गल परमाणु के प्रत्येक गुण सूक्ष्म स्वरूप में ध्वनि में भी होते हैं। तत्त्वार्थ सूत्र जैनियों के दिगंबर व श्वेताम्बर सभी को मान्य है, उसमें स्पष्ट रूप से पुद्गल द्रव्य व उसके सूक्ष्मतम, अविभाज्य अंश स्वरूप परमाणु में वर्ण, गंध, रस और स्पर्श होने का निर्देश किया गया है। अतः ध्वनि का भी वर्ण जैसे किसी अतीन्द्रिय ज्ञानी पुरुष देख सकते हैं वैसे अन्य किसी को उसका रस या गंध का भी अनुभव हो सकता है। हालाँकि, ध्वनि के स्पर्श का अनुभव तो सभी को होता ही है और टेप रेकॉर्डर, ग्रामोफोन की रेकॉर्ड इत्यादि ध्वनि के स्पर्श से ही तैयार होते हैं। बहुत तीव्र ध्वनि के स्पर्श का भी हम सब को स्पष्ट रूप से अनुभव होता है। उसके बारे में ज्यादा कुछ लिखने की आवश्यकता नहीं है।

जैन प्राचीन परंपरा में कुछ विशिष्ट तपस्वियों को तप के प्रभाव से विशिष्ट शक्तियाँ प्राप्त होने का निर्देश मिलता है। ऐसी शक्तियों को जैन साहित्य में लब्धि कहा जाता है। श्री सिद्धचक्रमहापूजन नामक विधि विधान विषयक ग्रंथ में ऐली भिन्न-भिन्न 48 विशिष्ट लब्धियों के नाम पाये जाते हैं। उसमें संभिन्नस्रोतस् नामक एक विशिष्ट है। यह लब्धि जिसको प्राप्त होती है, वह अपनी किसी भी एक इन्द्रिय द्वारा उससे भिन्न सबी चारों इन्द्रियों द्वारा प्राप्त होने वाला ज्ञान प्राप्त कर सकता है। अर्थात् केवल स्पर्शनेन्द्रिय से वह देख भी सकता है, सुगंध या दुर्गंध का अनुभव भी कर सकता है, शब्द भी सुन सकता है, और स्वाद भी ले सकता है। हालांकि आज के युग में ऐसी विशिष्ट लब्धि की प्राप्ति होना असंभव लगता है। अतः कि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को ऐसी बात में श्रद्धा उत्पन्न नहीं होती है । किन्तु उस कारण से ऐसी शक्तियाँ हो सकती नहीं है, ऐसा विधान करना उचित नहीं है ।

श्री अशोक कुमार दत्त को प्राप्त ध्वनि के वर्ण को प्रत्यक्ष करने की शक्ति भी ऐसी ही विशिष्ट अज्ञात लब्धि हो सकती है । श्री दत्त की यही विशिष्ट शक्ति जैन कर्मवाद के अनुसार मतिज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से प्राप्त हुई हो क्यों कि इसी कर्म से पाँचों इन्द्रिय व छठ्ठे मन द्वारा प्राप्त ज्ञान का आवरण होता है । अर्थात् यही कर्म इन्द्रिय प्रत्यक्ष ज्ञान में बाधक होता है । जब इसी कर्म का आवरण आत्मा के ऊपर से दूर होता है तब सहजता से ही इन्द्रिय प्रत्यक्ष ज्ञान होता है ।

श्री दत्त को हुए संस्कृत वर्णमाला संबंधित रंग का अनुभव और प्राचीन तंत्र विज्ञान के ग्रंथों में प्राप्त संस्कृत अक्षर के रंग में बहुत कुछ स्थान पर भिन्नता दिखाई पड़ती है । साथ-साथ तंत्र विज्ञान के ग्रंथों में भी परस्पर अक्षरों के वर्ण में भिन्नता दिखाई पड़ती है । तथापि यह संदर्भ इतना तो सिद्ध करता ही है कि प्राचीन काल के ऋषि-मुनि व विशिष्ट आराधक / तांत्रिकों को ध्वनि के रंग के बारे में अनुभव होता था ।

ब्रह्मांड में सभी जगह भाषा अर्थात् ध्वनि की उत्पत्ति व प्रसार किस तरह होता है उसको अच्छी तरह समझ लेने की आवश्यकता है । इसके बारे में आचारांग नामक पवित्र जैन आगम के द्वितीय श्रुतस्कंध / खंड के चौथे भाषाजात नामक प्रकरण में बताया है कि भाषा के चार प्रकार हैं ।

1. उत्पत्तिजात : आगे बतायी हुई वर्गणाओं में से भाषा वर्गणा में जिनका समावेश होता है वैसे परमाणु-समूह को जीव शरीर के द्वारा ग्रहण करता है और भाषा के रूप में परिणत करके पुनः बाहर निकालता है उसी परमाणुसमूह को *"उत्पत्तिजात"* शब्द कहा जाता है ।

2. पर्यवजात : उपर्युक्त पद्धति से बाहर निकले हुये शब्द के परमाणुसमूह द्वारा उसके आसपास के विश्रेणिगत अर्थात् पंक्तिबद्ध न हो ऐसे भाषा वर्गणा के परमाणुसमूह को टकराकर उसी परमाणुसमूह भाषा के रूप में परिणत करते हैं । इस नये परिणत हुए शब्द को *पर्यवजात* शब्द कहा जाता है ।

3. अन्तरजात : प्रथम प्रकार से परिणत हुये शब्द के परमाणुसमूह जब समश्रेणिगत अर्थात् पंक्तिबद्ध आये हुये भाषा वर्गणा के परमाणुसमूह को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टकराकर शब्द में परिणत होकर उसमें ही संमिलित हो जाते हैं तब उसी शब्द को *अन्तरजात* शब्द कहा जाता है ।

4. ग्रहणजात : बाद में जिन-जिन भाषा वर्गणा के परमाणुसमूह भाषा (शब्द) में परिणत हुये हैं चाहे वे समश्रेणिगत भाषा वर्गणा के परमाणुसमूह हों या विश्रेणिगत भाषा वर्गणा के परमाणुसमूह हों, उसमें से कुछेक परमाणुसमूह अपने कान के छिद्र में प्रवेश करते हैं जिनकी असर मस्तिष्क के श्रुति केन्द्र पर होती है, उसे *ग्रहणजात* शब्द कहा जाता है ।

ये परमाणुसमूह द्रव्य से अनंत प्रदेशात्मक अर्थात् अनंत परमाणु से युक्त होते हैं । क्षेत्र से असंख्यात प्रदेशात्मक अर्थात् असंख्यात आकाश प्रदेश में रहने वाले होते हैं । काल से असंख्यात समय की स्थिति वाले होते हैं और भाव से भिन्न भिन्न प्रकार के वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से युक्त होते हैं ।

इसके अलावा बिना ग्रहण किये गये भाषा रूप में परिणत परमाणुसमूह पुनः विसर्जित होकर भाषा वर्गणा के मूल परमाणुसमूह में या अन्य प्रकार के परमाणुसमूह में रूपांतरित हो जाते हैं ।

ध्वनि की शक्ति का आधार आधुनिक विज्ञान के अनुसार उनकी कंपसंख्या-आवृत्ति पर है । यदि कंपसंख्या ज्यादा हो तो उसमें ज्यादा शक्ति होती है । यदि ध्वनि की शक्ति का संगीत के रूप में व्यवस्थित उपयोग किया जाय तो वह बहुत उपकारक सिद्ध हो सकती है । पुद्गल परमाणु में अचिन्त्य शक्ति है ऐसा स्वीकार तो आधुनिक विज्ञान भी करता है । अंग्रेजी दैनिक द टाइम्स ऑफ इन्डिया के 3 सप्टे., 1995, रविवार की पूर्ति में संगीत के बारे में एक आलेख आया था । उसमें स्पष्ट रूप से बताया गया है कि वातावरण / हवा संगीत के सुरों से शक्तिशाली बनता है । (Air is charged with musical ions) हालाँकि उसी लेख में लेखक महोदय ने पाश्चात्य संगीत के पोप संगीत या डिस्को संगीत का वर्णन किया है तथापि उसमें बताया है कि उसी संगीत के दौरान किसी को वातावरण में भिन्न-भिन्न प्रकार के रंगीन आकार नृत्य करते हुए दिखाई पडते थे । अर्थात् उन लोगों को ध्वनि के वर्ण का साक्षात्कार हुआ था ।

संगीत की तरह मंत्र विज्ञान में भी ध्वनि का विशिष्ट प्रयोग होता है ।

मंत्र अर्थात् किसी निश्चित कार्य के लिये किसी देव या देवी से अधिष्ठित किसी महापुरुष द्वारा विशिष्ट शब्दों या अक्षरों के संयोजन द्वारा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लिपि बद्ध किया गया ध्वनि का स्वरूप । प्राचीन काल के महापुरुषों ने ऐसे विशिष्ट मंत्रों के निश्चित अर्थ अर्थात् विषयों को अपनी अतीन्द्रिय ज्ञानदृष्टि से देखे हैं और अतएव शब्द/मंत्र के ऐसे विशिष्ट रंगों को देखने वाले श्री अशोक कुमार दत्त अपने प्राचीन ऋषि-मुनिओं के लिये *" मंत्रार्थदृष्टा "* शब्द का प्रयोग करते हैं ।

मंत्रोच्चारण के रहस्य बताते हुए श्री अशोक कुमार दत्त अपने अनुभव का वर्णन करते हुए कहते हैं कि : *"मंत्रोच्चारण में व भगवद् नाम के उच्चारण करते समय भूरे व सफेद रंग कण समूह देखे जाते हैं और उससे प्राणीओं का शरीर पुष्ट होता है । उसके साथ-साथ मंत्रोच्चारण से सूक्ष्म शरीर प्रकाशपुंज की चमक व तेजस्विता बढ जाती है । अतएव भगवद्नाम जप व मंत्रोच्चारण का विधान पूर्णतः वैज्ञानिक है उसका मुझे भान हुआ ।"*

लेफ. कर्नल सी. सी. बक्षी अपनी *" वैश्विक चेतना "* किताब में मंत्रजाप के बारे में लिखते हैं कि प्रत्येक आवाज, ध्वनि या शब्द, उसका मानसिक या वाचिक उच्चारण होने पर उस समय निश्चित रूप में स्पंदन उत्पन्न करते हैं । जब हम विचार करते हैं उस समय भी (अपने मस्तिष्क में शब्द, ध्वनि की अस्पष्ट उत्पत्ति होती है जिसे संस्कृत व्याकरण के निष्णात या वैयाकरण स्फोट कहते हैं और) उस अक्षरों की निश्चित आकृति अपने मन के समक्ष बन जाती है ।

वर्तमान में पश्चिम में मंत्र, यंत्र व तंत्र के बारे में विशिष्ट कहा जाय ऐसा अनुसंधान चलता है और विभिन्न किताबों द्वारा मंत्र, यंत्र व तंत्र के रहस्य वैज्ञानिक पद्धति से प्रस्तुत किये जाते हैं ।

यंत्र वस्तुतः मंत्र में स्थित अक्षरों के संयोजन से बने हुए शब्द का आकृति स्वरूप है । थोड़े ही साल पहले इंग्लैण्ड से प्रकाशित एक अंग्रेजी किताब Yantra देखने को मिली । (लेखक : मधु खन्ना, प्रकाशक : Thames Hudson) उसमें रोनाल्ड नामेथ (Ronald Nameth) नाम के एक विज्ञानी ने टोनोस्कॉप (Tonoscope) नामक एक वैज्ञानिक उपकरण से इलेक्ट्रोनिक वाईब्रेशन फिल्ड (Electronic vibration field) में से श्रीसुक्त के ध्वनि को प्रसारित किया और उस ध्वनि का श्रीयंत्र की आकृति में रूपांतर हो गया । उसका स्थिर चित्र भी दिया गया है ।

इसका अर्थ यह हुआ कि श्रीयंत्र श्रीसुक्त का आकृति स्वरूप है । जिस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तरह ग्रामोफोन की रेकॉर्ड में ध्वनि को अंकित किया जाता है ठीक उसी तरह किसी भी मंत्र के ध्वनि को उसी साधन में से प्रसारित करने पर उसका आकृति स्वरूप प्राप्त हो सकता है । साथ-साथ कुछेक लोगों का मानना है कि जैसे ग्रामोफोन की रेकॉर्ड में से पुनः ध्वनि की प्राप्ति हो सकती है वैसे यंत्राकृति में से पुनः मंत्र की प्राप्ति हो सकती है । तथा जैसे आधुनिक भौतिकी में शक्ति का पुद्गल (द्रव्य कण) में और पुद्गल (द्रव्य कण) का शक्ति में परिवर्तन होता है वैसे ही मंत्र का यंत्र में और यंत्र का मंत्र में परिवर्तन हो सकता है । अतएव यंत्र के स्थान पर मंत्र और मंत्र के स्थान पर यंत्र रखा जा सकता है ।

प्राचीन काल के महापुरुष स्वयं जिन मंत्रों की आराधना करते होंगे, उन मंत्रों का आकृति स्वरूप अर्थात् यंत्रों को उन्हों ने स्वयं अपनी दिव्य दृष्टि से देखा होगा या तो उन मंत्रों के अधिष्ठायक देवों ने प्रत्यक्ष / प्रसन्न होकर उन मंत्रों का यंत्र स्वरूप उन साधकों को बताया होगा, बाद में उन साधकों ने उसी स्वरूप को भोजपत्र या ताडपत्र पर आलेखित किया होगा और वह परंपरा से अपने पास आया है ।

वस्तुतः यंत्र एक प्रकार का भिन्न भिन्न भौमितिक आकृतियों का संयोजन ही है । जैसे-जैसे भिन्न-भिन्न व्यंजन व स्वर के संयोजन से मंत्र निष्पन्न होता है वैसे-वैसे भिन्न-भिन्न प्रकार की भौमितिक आकृतियों के संयोजन से यंत्र बनते हैं ।

संक्षेप में, जिस तरह मंत्रजाप से इष्टफल सिद्धि होती है वैसे ही यंत्र भी इष्टफल की सिद्धि कर सकता है क्योंकि वह भी मंत्र का ही स्वरूप है । यह है ध्वनि की अद्भुत शक्ति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org